सीमा शुल्क का निरीक्षक, अखनूर जम्मू एवं कश्मीर

बनाम

यशपाल और अन्य

आपराधिक अपील संख्या. 2009 का 447

मार्च 6, 2009

(न्यायमूर्ति डॉ. अरिजीत पसायत, डी.के. जैन और डां.मुकुंदकम शर्मा)

स्वापक औषधि एवं मन प्रभावी पदार्थ अधिनियम ,1985

धारा 8, 21, 41(2) - हेरोईन तस्करी - कस्टम विभाग ने जब्त की - अभियुक्त ने कस्टम अधिकारियों के समक्ष संस्वीकृति की - विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया - अभिनिर्धारित : कस्टम अधिकारियों के समक्ष की गयी संस्वीकृति अभियुक्त के ध्यान में नहींलायी गयी - उच्च न्यायालय के आदेश में कोई अनुचितता नहीं होने के कारण हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं। - कस्टम अधिनियम- 1962, धारा 110।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 :

धारा 313 (1)(b) - 'Shall' शब्द की व्याख्या 'न्यायालय पर आज्ञापक' के रूप में की जानी चाहिए इसका उपयोग अभियुक्त के लाभ के लिए किया होना चाहिए - शब्द एवं शब्दाविलयां।

विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थीगण को स्वापक आैषधि एवं मन प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 8, और 21 के तहत दोषी करार दिया गया। हांलाकि, उच्च् न्यायालय ने उन्हें दोषमुक्त किया। इसलिए यह अपील की गई।

न्यायालय ने अपील खारिज की।

अभिनिर्धारित :1. यह सुस्थापित विधि है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा313 प्रावधान मुख्यत अभियुक्त को फायदा पहुंचाने के लिए हैं। तथा ये न्यायालय को अंतिम विनश्चय तक पहुॅचने में सहायक है। साथ ही यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रावधान का उद्देश्य उसे किसी स्थिति में पहुचानानहीं है, बल्कि विधिक मैक्सिम ऑडीअल्टरम पार्टम में निहित प्राकृतिक न्याय के सबसे लाभकारी सिद्धांत का अनुपालन करना है। संहिता की धारा 313 में उप-धारा (1) के खंड (ए) में "हो सकता है" शब्द बिना किसी संदेह के इंगित करता है कि भले ही न्यायालय उस खंड के तहत कोई प्रश्न नहीं उठाता है, फिर भी अभियुक्त इसके लिए कोई शिकायत नहीं कर सकता है। लेकिन अगर न्यायालय उप-धारा के खंड (बी) के तहत आवश्यक प्रश्न पूछने में विफल रहती है तो इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त के लिए बाधा उत्पन्न होगी और वह वैध रूप से दावा कर सकता है कि कोई भी साक्ष्य, उसे समझाने का अवसर दिए बिना, उसके खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता हैअब यह पूर्णत: निर्धारित हो गया है कि

जिस परिस्थिति के बारे में अभियुक्त को स्पष्टीकरण देने के लिए नहीं कहा गया था, उसका उपयोग उसके विरूद्ध नहीं किया जा सकता है। [पैरा 21, 22] [130-G-H;131-A-B]

जयदेव बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1963 एससी612 - पर भरोसा जताया गया .

हेट सिंह भगत सिंह मध्य भारत राज्य एआईआर 1953 एससी 468; विभूति भूषण दास गुप्ता एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एआईआर (1969) एससी 381 =(1969) 2 एससीआर 1041; उषा के- पिल्लई बनाम के. श्रीनिवास एवं अन्य 1993 (3) एससी 208 और शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य 1973 (2) एससीसी 793- संदर्भित।

2. लेकिन अब विचारणीय स्थिति यह है कि संचार एवं प्रसारण की प्रौद्योगिकी में क्रांतिकारी परिवर्तन तथा देश में कानूनी सहायता की सुविधाओं में उल्लेखनीय सुधार के साथ क्या यह आवश्यक है कि सभी मामलों में अभियुक्त को न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहकर उत्तर देना होगा। हम स्पष्ट करते हैं कि यह आवश्यकता है और सामान्य नियम होगा। हालाँकि, यदि उपस्थित रहने में अनुचित कठिनाई और अधिक व्यय शामिल है, तो क्या न्यायालय कठिनाइयों को कम नहीं कर सकती। यदि न्यायालय का मानना है कि जिस स्थिति में उसने ऐसी दलील दी है वह वास्तविक है, तो क्या न्यायालय को यह कहना चाहिए कि

उसके बचने का कोई रास्ता नहीं है, लेकिन उसे सभी कष्टों और कठिनाइयों से गुजरना होगा और व्यक्तिगत रूप से स्वयं को नयायालय में पेश करके ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना होगा। यदि उसी मामले में अन्य अभियुक्त हैं, और न्यायालय ने पहले ही उनकी परीक्षापूरी कर ली है, तो क्या उन्हें भी अपने मामले को अंतिम रूप दिए बिना, या अपने मुकदमे की आगे की प्रगति दर्ज किए बिना लंबे समय तक इंतजार करना चाहिए जब तक कि उनके सह-अभियुक्त न्यायालय में उपस्थित होकर में सक्षम न हो जाएं? व्यक्तिगत रूप से और न्यायालय के सवालों का उत्तर दें? ऐसी स्थिति में आपराधिक न्यायालय को असहाय क्यों बनाया जाना चाहिए?[पैरा 23] [131-C-F]

3. अपराधों की एक श्रेणी जिसे विशेष रूप से संहिता की धारा 313 (1) (बी) की कठोरता से छूट दी गई है, वह है "समन मामले"। यह याद रखना चाहिए कि प्रत्येक मामला जिसमें विचारणीय अपराध दो वर्ष से अनधिक अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है, एक "समन मामला" है। इस प्रकार, अन्य सभी अपराध आम तौर पर पूरी तरह से एक अलग श्रेणी के होते हैं, जिनमें तीन साल की कारावास से लेकर आजीवन कारावास तक और यहां तक कि मृत्युदंड तक की अलग-अलग सजा वाले अपराध शामिल हैं। इसलिए उस श्रेणी में कई अपराध हैं जो गंभीर और बहुत गंभीर अपराधों की तुलना में गंभीरता में बहुत कम गंभीर हैं। यहां तक कि कम

गंभीर अपराधों से जुड़े मामलों में भी, क्या न्यायालय ऐसे अभियुक्त की मदद के लिए हाथ नहीं बढ़ा सकती, जो इस तरह की मदद का हकदार है?

[पैरा 24] [131-F-H; 132-A]

4.1 संहिता की धारा 243 (1), पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित वारंट मामले की सुनवाई में अभियुक्त को, कोई भी लिखित बयान देने में सक्षम बनाती है। जब ऐसा कोई बयान न्यायालय में दिया जाता है तो न्यायालय उसे अभिलेख का हिस्सा बनाने के लिए बाध्य है। भले ही ऐसा मामला पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित न किया गया हो, तब भी अभियुक्त को (धारा 247 के तहत) वही अधिकार है। यहां तक कि सत्र न्यायालय द्वारा विशेष रूप से विचारणीय अपराधों में शामिल अभियुक्त भी संहिता की धारा 233 (2) के तहत लिखित कथन देने के अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं। यह सामान्यत सबको ज्ञात है कि ऐसे अधिकांश लिखित कथन, अभियुक्त के अधिवक्ता द्वारा तैयार किए जाते हैं। यदि इस तरह के लिखित बयानों को पूरी तरह से सीधे अभियुक्त के बयानों के रूप में माना जा सकता है, तो इसके बाद यहां निम्न लिखित विशेष आकस्मिकताओं में निर्धारित तरीके से उसके द्वारा दिए गए उत्तरों को समान महत्व क्यों नहीं दिया जाता है। [पैरा 25] [131-G-H; 132-A-B]

4.2. हमारा मानना है कि ऐसी विशेष अत्यावश्यकताओं के संबंध में एक व्यावहारिक और मानवतावादी दृष्टिकोण आवश्यक है। संहिता की धारा

313(1) के खंड (बी) में शब्द "करेगा" की व्याख्या न्यायालय पर अनिवार्य के रूप में की जानी चाहिए और इसका अनुपालन तब किया जाना चाहिए जब यह अभियुक्त के लाभ के लिए हो। लेकिन अगर यह उचित मामलों में उसकेपूर्वाग्रह और नुकसान के लिए काम करता है तो न्यायालय को ऐसा करना चाहिए, उदाहरण के लिए, यदि अभियुक्त न्यायालय को संतुष्ट करता है कि वह भारी खर्च वहन करने के बिना न्यायालयके स्थल तक पहुंचने में असमर्थ है या वह शारीरिक अक्षमता के कारण लंबी यात्रा करने में असमर्थ है या ऐसी ही कोई अन्य कठिनाई है तो उसे ऐसी कठिनाईयों से छुटकारा दिलाये और साथ ही ऐसे कदम उठाये जिससे धारा 313 की आवश्यकताओं की भी पालना सुनिश्चित हो। यह कैसे हासिल किया जा सकता है? [पैरा 26] [132-E-G]

बसव राज आर पाटिल बनाम कर्नाटक राज्य 2000 (8)एससीसी 740 और केया मुखर्जी बनाम मैग्मा लीजिंग लिमिटेड और अन्य (2008) 8 एससीसी 447 - रिलाईड ऑन।

5. मौजूदा मामले में किसी भी अभिशंसनीय सामग्री का कोई संदर्भ नहीं था। यदि अभियोजन मामले की नींव सीमा शुल्क अधिकारियों के समक्ष कथित संस्वीकृति थी, तो उस तथ्य को अभियुक्त व्यक्तियों के ध्यान में नहीं लाया गया था। आक्षेपित निर्णय में कोई त्रुटि नहीं हैं, अतः हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। [पैरा 28] [133-A-B]

केस लॉ रेफरेंस

एआईआर 1953 एससी 468	निर्दिष्ट	पैरा12
एआईआर (1969) एससी 381	निर्दिष्ट	पैरा14
(1969) 2 एससीआर 1041		
1993 (3) एससीसी 208	निर्दिष्ट	पैरा17
1973 (2) एससीसी 793	निर्दिष्ट	पैरा18
एआईआर 1963 एससी 612	रिलाईड ऑन	पैरा20
2000 (8) एससीसी 740	रिलाईड ऑन	पैरा27
(2008) 8 एससीसी 447	रिलाईड ऑन	पैरा27

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील संख्या 447/2009।

जम्मू कश्मीर उच्च न्यायालय, जम्मू की आपराधिक अपील संख्या 17/1999 के निर्णय और आदेश दिनांक 11-10-2022।

के. राधाकृष्णन, संजीव के भारद्वाज, एच.आर.राव, अनिल कटियार, बी. कृष्णा प्रसाद अपीलकर्ता की ओर से।

एस.के.भटटाचार्य प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति डॉ. अरिजीत पसायत, द्वारा सुनाया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. इस अपील में जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ के निर्णय को चुनौती दी गई है, जिसमें प्रत्यर्थीगण को दोषमुक्त करने का निर्देश दिया गया था, जो स्वापक औषधि एवं मन प्रभावी पदार्थ अधिनियम ,1985 (संक्षिप्त में, 'अधिनियम') की धारा 8 और 21 के तहत दंडनीय अपराधों के दोषी पाए गए थे।

3. पृष्ठभूमि तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं:

1 जुलाई, 1995 को सुबह लगभग 4.15 बजे सेना की गश्ती पार्टी ने, गांव हमीरपुर सिधार के दूसरी ओर, डीसीबी के अंतिम बिंदु के पास कुछ घुसपैठियों की संदिग्ध गतिविधि देखी, जिन्होंने चुनौती दिए जाने पर कुछ संदिग्ध सामग्री छोड़ दी और अंधेरे की आड़ में भाग निकले। इसकी सूचना मिलते ही, गांव के दूसरी ओर डेरा डाले सीमा शुल्क कर्मचारी मौके पर पहुंचे। सेना अधिकारियों और कस्टम स्टाफ दोनों को डीसीबी एंड पॉइंट के पास खेत में छोड़े गए दो सलवारों और एक प्लास्टिक बैग में कुछ संदिग्ध सामग्री मिली। उन्होंने क्षेत्र के दो पंचों को बुलाया और खेत में लावारिस पड़े मिले तीन पैकेटों को उनकी उपस्थिति में खोला गया, जिसमें से हल्के भूरे

रंग के पाउडर के 56 पैकेट, प्रत्येक का वजन एक किलोग्राम था, सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 (संक्षेप में 'सीमा शुल्क अधिनियम') की धारा 110 के तहत सीमा शुल्क कर्मचारियों द्वारा बरामद और जब्त किए गए। इसके अलावा मौके से एक जोड़ी चप्पल और दो जोड़ी जूते कुल तीन फुटवेयर भी बरामद किये गये बरामद सामग्री पैकेटों में और सूती कपड़े में लिपटे पीले भूरे रंग के कागज में उर्दू खादी नंबर 1, नंबर 858 और 223 में अंकित मुहर वाले पॉलिथीन बैग में रखे गए कुछ स्वापक औषधि प्रतीत होती है। इसे कस्टम स्टाफ द्वारा संयुक्त राष्ट्र ड्रग परीक्षण किट के जरिये दवा परीक्षण के अधीन किया गया था और यह पुष्टि की गई कि सामग्री प्रतिबंधित मॉर्फिन हेरोइन या इसका व्युत्पन्न थी। हेरोइन का रिकवरी कम -जब्ती मेमो तैयार किया गया और मौके पर ही पंचनामा बनाया गया। जब्त सामग्री से नमूने निकाले गए और रासायनिक विश्लेषण के लिए एफएसएल, जम्मू को भेजा गया, जिसने अपनी रिपोर्ट में खुलासा किया कि बरामद हल्के भूरे रंग के पाउडर से लिए गए नमूनों में डियाक्टाइल मॉर्फिन 'हेरोइन मौजूद पाया गया। घुसपैठियों की पहचान जब्ती से पहले दर्ज की गई गुप्त सूचना रिपोर्ट के माध्यम से स्थापित की गई थी। खुलासा हुआ कि दो संदिग्धों के नाम हकीकत सिंह और यशपाल थे. मौके से तीन पैकेज और तीन जोड़ी फुट वियरिंग बरामद हुई। तीन पैकेट और तीन जोड़ी फुटवियर की बरामदगी से संकेत मिलता है कि दोनों घुसपैठियों के साथ तीसरा व्यक्ति भी था।

यशपाल को अधीक्षक, सीमा शुल्क द्वारा सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 108 के तहत तलब किया गया था। वह उनके सामने पेश हुआ और 27.7.1995 को हेरोइन की तस्करी में खुद को शामिल करते हुए इकबालिया बयान दिया और उसके बाद उसे गिरफ्तार कर लिया गया। अपने स्वैच्छिक संस्वीकृति बयान में, उसने दो सहयोगियों, हकीकत सिंह और परमजीत सिंह के नामों का खुलासा किया और छप्पन किलोग्राम हेरोइन को भारत-पाक सीमा घटनाओं के क्रम का विवरण बताया। गांव हमीरपुर सिद्धार तक पहुंचने वो और सेना के गश्ती दल द्वारा इसका पता चलने पर, वह सामग्री और तीन जोड़ी पैरों के जूते छोड़कर घटनास्थल से भाग गया। उसने यह भी कबूल किया कि उसे प्रतिबंधित वस्तुओं की ढुलाई के लिए हकीकत सिंह उर्फ किटी और परमजीत सिंह उर्फ पम्मा द्वारा 2000 रुपये का भुगतान किया जा रहा था। इसी प्रकार, 23 अगस्त, 1995 को अभियुक्त हकीकत सिंह को भी कस्टम स्टाफ, जम्मू ने रोक लिया और उसने उसी आशय का स्वैच्छिक बयान दिया। उसने कबूल किया कि सामग्री की ढुलाई के लिए उसे 10,000 रुपये का भुगतान किया जा रहा था। परमजीत सिंह कस्टम अधिकारियों के सामने पेश नहीं हुआ। साक्ष्य एकत्र किए गए और सीमा शुल्क निरीक्षक द्वारा सत्र न्यायाधीश (विशेष न्यायाधीश) के समक्ष शिकायत प्रस्तुत की गई। अभियुक्तों ने आरोपों से इंकार कियाऔर उन पर मुकदमा चलाया गया। तीसरे अभियुक्त के खिलाफ अलग से कार्रवाई की गई। विद्वान विचारण न्यायालय ने पक्षकारोंद्वारा पेश

किये साक्ष्य का विश्लेषण करने के बाद निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्तों ने अधिनियम की धारा 8 और 21 के तहत दंडनीय अपराध किए हैं और दोषसिद्धि और सजा दर्ज की ।

4. जैसा कि ऊपर बताया गया है,विचारण न्यायालय ने अभियुक्त उत्तरदाताओं को दोषी पाया और दोषसिद्धि दर्ज की और उन्हें सजा सुनाई।

5. अपील में दो तर्क लिये गये। पहला अधिनियम की धारा 41(2) का अनुपालन न करने से संबंधित है और दूसरा अभियुक्त के समक्ष अन्तर्वलित करने वाली सामग्री न रखने से संबंधित है, जबकि बयान पुराने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 के तहत दर्ज किया गया था (संक्षेप में 'पुराना') कोड') या नई दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 (संक्षेप में' नया कोड')। उच्च न्यायालय ने दूसरों तर्क में दम पाया और दोषमुक्त करने का निर्देश दिया।

6. अपील के समर्थन में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया कि हालांकि अभियुक्तों के ध्यान में लाने में मामूली त्रुटियां और चूक हुई इसके बावजूद अन्तर्वलित करने वाली सामग्री तुच्छ नहीं हैं, इस मामले में अभियोजन मामले की नींव से संबंधित एक बहुत ही विशिष्ट दलील और जिन सबूतों पर भरोसा किया गया था, उन्हें अभियुक्त के सामने रख दिया गया था और ऐसा होने पर, उच्च न्यायालय ने दोषमुक्त करने का निर्देश देकर गलती की है।

7. अपीलकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ताका रुख यह था कि दृष्टिकोण अति-तकनीकी था और संहिता की धारा 342 या धारा 313 के वास्तविक इरादे के अनुरूप नहीं था।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निर्णय का समर्थन किया।

9. यह ध्यान में रखना चाहिए कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 41(2) का अनुपालन न करने से संबंधित तर्क को स्वीकार नहीं किया। उसने केवल इस आधार पर हस्तक्षेप किया कि जब आरोपियों का परीक्षण किया जा रहा था तब सुसंगत अभियोगात्मक सामग्री उनके समक्ष नहीं रखी गयी थी।

10. सीआरपीसी की धारा 313 इस प्रकार है:

> "313. अभियुक्त की परीक्षाकरने की शक्ति.--(1) प्रत्येक जांच या विचारण में, अभियुक्त को उसके खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को समझाने के लिए व्यक्तिगत रूप से सक्षम करने के उद्देश्य से, न्यायालय--
>
> (ए) किसी भी स्तर पर, अभियुक्त को पहले से चेतावनी दिए बिना, उससे ऐसे प्रश्न पूछ सकता है जो न्यायालय आवश्यक समझे;

(बी) अभियोजन पक्ष के गवाहों की जांच हो जाने के बाद और अपने बचाव के लिए बुलाए जाने से पहले, आम तौर पर मामले पर उससे पूछताछ करेगा:

बशर्ते कि समन मामले में, जहां न्यायालय ने अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट दे दी है, वह खंड (बी) के तहत उसकी परीक्षा से भी छूट दे सकती है।

(2) जब उप-धारा (1) के तहत अभियुक्त की जांच की जाती है तो उसे कोई शपथ नहीं दिलाई जाएगी।

(3) अभियुक्त ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने से इनकार करके, या उनके गलत उत्तर देकर स्वयं को दंड का भागी नहीं बनाएगा।

(4) अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों को ऐसी जांच या परीक्षण में ध्यान में रखा जा सकता है, और किसी अन्य अपराध की किसी अन्य जांच, या परीक्षण में उसके लिए या उसके खिलाफ साक्ष्य में रखा जा सकता है, जो ऐसे उत्तरों से पता चलता है कि उसने अपराध किया हैं।''

11. पुरानी संहिता में उक्त प्रावधान की पूर्वगामी धारा 342 थी। इसे निम्न प्रकार उपबंधित कियागया था:

"342. (1) अभियुक्त को उसके खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को समझाने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से, न्यायालय, किसी भी जांच या परीक्षण के किसी भी चरण में, अभियुक्त को पहले से चेतावनी दिए बिना, उससे ऐसे प्रश्न पूछ सकती है जैसे कि न्यायालय आवश्यक समझती है, और, पूर्वोक्त उद्देश्य के लिए, अभियोजन पक्ष के गवाहों की जांच के बाद और अपने बचाव के लिए बुलाए जाने से पहले आम तौर पर मामले पर उससे पूछताछ करेगी।

(2) अभियुक्त ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने से इनकार करके, या उनके गलत उत्तर देकर स्वयं को दंड का भागी नहीं बनाएगा; लेकिन न्यायालय और जूरी (यदि कोई हो) ऐसे इनकार या उत्तर से ऐसा निष्कर्ष निकाल सकते हैं जैसा वह उचित समझते हैं।

(3) अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों को ऐसी जांच या परीक्षण में ध्यान में रखा जा सकता है, और किसी अन्य अपराध की किसी अन्य जांच, या परीक्षण में उसके लिए या उसके खिलाफ साक्ष्य में रखा जा सकता है, जो ऐसे उत्तरों से पता चलता है कि उसने किया है। प्रतिबद्ध।

(4) जब उप-धारा (1) के तहत अभियुक्त की जांच की जाती है तो उसे कोई शपथ नहीं दिलाई जाएगी।"

12. हेट सिंह भगत सिंह बनाम मध्य भारत राज्य (एआईआर 1953 एससी 468) में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने पुरानी संहिताके तहत धारा के मूल रूप में बने रहने की स्थिति से निपटते हुए कहा।

> "सुपुर्द करने वाले मजिस्ट्रेट और सेशन जज द्वारा अभिलिखित किए गए अभियुक्त के कथन का उद्देश्य भारत में वहीं है जो इंग्लैंड और अमेरिका में वह गवाह-बॉक्स में अपने तरीके से कहने के लिएस्वतंत्र हो।" उन्हें उसे साक्ष्य के रूप में प्रासकरना होता है उसे साक्ष्य माना जाता है तथा विचारण में उस पर पूरी तरह विचार किया जाता है।"

13. इसके बाद, संसद ने पुरानी संहिता में धारा 342-ए जोडी (जो वर्तमान संहिताकी धारा 315 से मेल खाती है) जिसके द्वारा एक अभियुक्त को अनुमति दी गयी कि यदि वह चाहे तो खुद को गवाह के रूप में परीक्षित किये जाने की पेशकश कर सकता है।

14. विभूति भूषण दास गुप्ता(सुप्रा)के मामले में पुरानी संहिता की धारा 342 और 342-ए के संयुक्त प्रभाव पर विचार करने वाली एक अन्य तीन-न्यायाधीश पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणियां कीं:

> "धारा 342-ए के तहत केवल अभियुक्त ही व्यक्तिगत रूप से साक्ष्य दे सकता है और उसके अधिवक्ताके साक्ष्य को उसके साक्ष्य के रूप में नहीं माना जा सकता है। धारा 342 के तहत अभियुक्त के उत्तरों का उद्देश्य उन साक्ष्यों का प्रतिस्थापन है जो वह धारा 342-ए के तहत साक्षी के रूप में दे सकता है। धारा 342 के तहत प्रश्नों के उत्तर देने का विशेषाधिकार और कर्तव्य एक अधिवक्ताको नहीं सौंपा जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सम्मन काप्रारूप दर्शाता है कि अधिवक्ता अभियुक्त के खिलाफ आरोपों का उत्तर दे सकता है, लेकिन आरोपों का उत्तर देने में वह ऐसा नहीं कर सकता है जो केवल अभियुक्त ही व्यक्तिगत रूप से कर सकता है। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य लिए जाने के दौरान अधिवक्ता को अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने की अनुमति दी जा सकती है लेकिन अभियोजन साक्ष्य की समाप्ति पर अभियुक्त को परीक्षित किया जानाचाहिए और

उसके स्थान पर उसके अधिवक्ता को परीक्षित नहीं किया जा सकता हैं।"

15. विधि आयोग ने अपनी 41वीं रिपोर्ट में उपरोक्त निर्णयों और कानूनी विशेषज्ञों द्वारा रेखांकित किए गए विभिन्न अन्य दृष्टिकोणों पर विचार किया और फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद रिपोर्ट बनाई कि:

(i) समन मामलों में जहां धारा 205 या धारा 540-ए के तहत अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट दे दी गई है , न्यायालय के पासअभियुक्त की परीक्षा से छूट देने की शक्ति होनी चाहिए; और

(ii) अन्य मामलों में, यहां तक कि जहां उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट दे दी गई है, अभियुक्त की व्यक्तिगत रूप से परीक्षाकी जानी चाहिए।"

16. उक्त सिफ़ारिश का संसद द्वारा पालन किया गया है और संहिता की धारा 313, जैसा कि वर्तमान में है, इसका परिणाम है। प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय के पास केवल समन मामलों में अभियुक्त की परीक्षाके दौरान किसी अभियुक्त की भौतिक उपस्थिति से छूट देने का विवेकाधिकार है और अन्य सभी मामलों में अभियोजन साक्ष्य की समाप्ति के पश्चात अभियुक्त की व्यक्तिगत रूप से परीक्षाकरना न्यायालय के लिए

अनिवार्य है। बहरहाल, विधि आयोग इस बात से अवगत था कि अंततः नियम में ढील देनी पड़ सकती है, खासकर जब देश में साक्षरता और कानूनी सहायता सुविधाओं में सुधार हो। इस सोच को विधि आयोग द्वारा उसी रिपोर्ट में दिए गए निम्नलिखित सुझाव से समझा जा सकता है:

> "हम मामले के विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के बाद, जैसा कि ऊपर संक्षेप में बताया गया है, इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि धारा 342 को हटाया नहीं जाना चाहिए। हमारी राय में, इसे क़ानून-पुस्तक से हटाए जाने का समय अभी तक नहीं आया है।साक्षरता में वृद्धि और कानूनी सहायता के लिए बेहतर सुविधाओं के साथ, भविष्य में यह कदम उठाना संभव हो सकता है।"

17. इस व्यवस्था पर वर्तमान स्थिति के अनुसार विचार किया जाना चाहिए, विशेष रूप से एक चौथाई सदी से अधिक समय बीत जाने के बाद, इस अवधि के दौरान कंप्यूटरीकरण के आगमन के कारण संचार और ट्रांसमिशन की तकनीक में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। पिछले पच्चीस वर्षों के दौरान देश में विधिक सहायता की सुविधाओं में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। इसलिए अब यह दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। हम इस तथ्य के प्रति सचेत हैं कि उषा के. पिल्लई (1993 (3) एससीसी 208) में दो-न्यायाधीशों की पीठमें पाया गया है कि किसी अभियुक्त की व्यक्तिगत रूप

से परीक्षाकरने की छूट केवल समन मामले में ही दी जा सकती है। वे एक ऐसे मामले पर विचार कर रहे थे जिसमें अपराध आईपीसी की धारा 363 में था। दो-न्यायाधीशों की खंडपीठ ने इस प्रकार कहा: (एससीसी पीपी.212-13, पैरा 4)

> "एक वारंट मामले को मृत्यु, आजीवन कारावास या दो साल से अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित के रूप में परिभाषित किया गया है। चूंकि एक अपराध आईपीसी की धारा 363 के तहत अपराध में दो साल से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा हो सकती है और यह एक वारंट मामला है न कि समन मामला। इसलिए, ऐसे मामलों में भी जहां न्यायालय ने संहिता की धारा 205 (1) या धारा 317 के तहत अभियुक्त को व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट दे दी हैन्यायालय संहिता की धारा 313 के खंड (बी) के तहत अभियुक्त को परीक्षा से छूट नहीं दे सकती क्योंकि ऐसी परीक्षा अनिवार्य है।"

18. प्रासंगिक रूप से हम शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य (1973 (2) एससीसी 793) में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय को नजरअंदाज नहीं कर सकते क्योंकि पीठ ने अभियोजन साक्ष्य समाप्त होने के पश्चात आरोपियों से पूछताछ के संबंध में

प्रावधान का दायरा बढ़ा दिया है।उस मामले में विद्वान न्यायाधीश अभियोजन साक्ष्य में उसके खिलाफ पेश होने वाली एक महत्वपूर्ण परिस्थिति पर अभियुक्त से प्रश्न पूछने की चूक के परिणामों पर विचार कर रहे थे। तीन-न्यायाधीशों की खंडपीठ ने उसमें निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं: (एससीसी पृष्ठ 806, पैरा 16)।

> "यह घिसा-पिटा कानून है, फिर भी मौलिक है, कि कैदी का ध्यान प्रत्येक अभियोगात्मक सामग्री पर आकर्षित किया जाना चाहिए ताकि वह इसे समझाने में सक्षम हो सके। यह यह एक आपराधिक मामलों की बुनियादी निष्पक्षता है और इस क्षेत्र में विफलताएं विचारण की वैधता को गंभीर रूप से खतरे में डाल सकती हैं, यदि इसके परिणामस्वरूप न्याय की क्षति होती है। हालाँकि, जहां ऐसी चूक हुई है, यह वास्तव में कार्यवाही को दूषित नहीं करती है और यदि कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न होता है इस तरह के दोष को अभियुक्त द्वारा स्थापित किया जाना चाहिए। अभियुक्त के समक्ष साक्ष्य सामग्री नहीं रखे जाने की स्थिति में, न्यायालय को आमतौर पर ऐसी सामग्री को विचार से हटा देना चाहिए। अपीलीय न्यायालय के लिए यह भी विकल्प है कि वह अभियुक्त के अधिवक्ता को यह दर्शित करने के लिए कि

अभियुक्त के पास उसके विरुद्ध स्थापित परिस्थितियों जो उसके समक्ष नहीं रखी गई के संबंध में क्या स्पष्टीकरण है, और यदि अभियुक्त अपीलीय न्यायालय को ऐसी परिस्थितियों के बारे में कोई संतोषजनक या उचित स्पष्टीकरण देने में असमर्थ है, तो न्यायालय यह मान सकती है कि कोई स्वीकार्य उत्तर मौजूद नहीं है और यहाँ तक कि यदि अभियुक्त से विचारण नयायालय में उचित समय पर परीक्षा की गई होती तो वह उन परिस्थितियोंको स्पष्ट करने में कोई अच्छा आधार नहीं दे पाता, जिन पर विचारण न्यायालय ने अपनी सजा के लिए भरोसा किया था।"

19. उपरोक्त दृष्टिकोण से पता चलता है कि प्रावधान की कठोरता में कुछ कमी अभियुक्त द्वारा उठाए गए विवाद के प्रकाश में भी की जा सकती है कि विचारण न्यायालय द्वारा एक महत्वपूर्ण परिस्थिति के संबंध में उसकी परीक्षा न करने से उसके प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है। अपीलीय चरण में अभियुक्त के अधिवक्ता द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को स्वयं अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों के लिए पर्याप्त विकल्प माना गया।

20. संहिता की धारा 313 के तहत किसी अभियुक्त की परीक्षाका उद्देश्य क्या है? धारा स्वयं स्पष्ट भाषा में उद्देश्य की घोषणा करती है कि

यह "अभियुक्त को व्यक्तिगत रूप से उसके विरूद्ध प्रस्तुत साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को समझाने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से है।" जय देव बनाम पंजाब राज्य (एआईआर 1963 एससी 612) में न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर, (जैसा कि वह तब थे) ने तीन-न्यायाधीशों की बेंच के लिए बोलते हुए यह निर्धारित करने मेंकि प्रावधान का उचित रूप से अनुपालन किया गया है या नहीं अंतिम परीक्षण पर ध्यान केंद्रित किया है उन्होंने इस प्रकार कहा:

> "यह निर्धारित करने में अंतिम टेस्ट कि धारा 342 के तहत अभियुक्त से निष्पक्ष रूप से पूछताछ की गई है या नहीं , यह पूछताछ करना होगा कि उसके खिलाफ अभियोजन मामले के संबंध में क्या, उससे पूछे गए सभी सवालों के संबंध में, उसे वह कहने का अवसर मिला जो वह कहना चाहता था । यदि ऐसा प्रतीत होता है कि अभियुक्त व्यक्ति की परीक्षा दोषपूर्ण थी और इस तरह उसके प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि यह एक गंभीर कमजोरी होगी।"

21. इस प्रकार यह अच्छी तरह से स्थापित है कि प्रावधान का उद्देश्य मुख्य रूप से अभियुक्त को लाभ पहुंचाना है और इसके

परिणामस्वरूप अंतिम निष्कर्ष तक पहुंचने में न्यायालय को लाभ पहचाना हो।

22. साथ ही यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रावधान का उद्देश्य उसे किसी स्थिति में पहचान नहीं है, बल्कि विधिक मैक्सिम ऑडी अल्टरम पार्टम में निहित प्राकृतिक न्याय के सबसे लाभकारी सिद्धांत का अनुपालन करना है। संहिता की धारा 313 में उप -धारा (1) के खंड (ए) में "हो सकता है" शब्द बिना किसी संदेह के इंगित करता है कि भले ही न्यायालय उस खंड के तहत कोई प्रश्न नहीं उठाताहै, फिर भी अभियुक्त इसके लिए कोई शिकायत नहीं कर सकता है। . लेकिन अगर न्यायालय उप-धारा के खंड (बी) के तहत आवश्यक प्रश्न पूछने में विफल रहती है तो इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त के लिए बाधा उत्पन्न होगी और वह वैध रूप से दावा कर सकता है कि कोई भी साक्ष्य, उसे समझाने का अवसर दिए बिना, उसके खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता हैअब यह पूर्णवत निर्धारित हो गया है कि जिस परिस्थिति के बारे में अभियुक्त को स्पष्टीकरण देने के लिए नहीं कहा गया था, उसका उपयोग उसके विरूद्ध नहीं किया जा सकता है।

23. लेकिन अब विचारणीय स्थिति यह है कि संचार एवं प्रसारण की प्रौद्योगिकी में क्रांतिकारी परिवर्तन तथा देश में कानूनी सहायता की सुविधाओं में उल्लेखनीय सुधार के साथ क्या यह आवश्यक है कि सभी

मामलों में अभियुक्त को न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहकर उत्तर देना होगा। हम स्पष्ट करते हैं कि यह आवश्यकता है और सामान्य नियम होगा। हालाँकि, यदि उपस्थित रहने में अनुचित कठिनाई और अधिक व्यय शामिल है, तो क्या न्यायालय कठिनाइयों को कम नहीं कर सकती। यदि न्यायालय का मानना है कि जिस स्थिति में उसने ऐसी दलील दी है वह वास्तविक है, तो क्या न्यायालय को यह कहना चाहिए कि उसके बचने का कोई रास्ता नहीं है, लेकिन उसे सभी कष्टों और कठिनाइयों से गुजरना होगा और व्यक्तिगत रूप से स्वयं को नयायालय में पेश करके ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना होगा। यदि उसी मामले में अन्य अभियुक्त हैं, और न्यायालय ने पहले ही उनकी परीक्षापूरी कर ली है, तो क्या उन्हें भी अपने मामले को अंतिम रूप दिए बिना, या अपने मुकदमे की आगे की प्रगति दर्ज किए बिना लंबे समय तक इंतजार करना चाहिए जब तक कि उनके सह-अभियुक्त न्यायालय में उपस्थित होकर में सक्षम न हो जाएं? व्यक्तिगत रूप से और न्यायालय के सवालों का उत्तर दें? ऐसी स्थिति में आपराधिक न्यायालय को असहाय क्यों बनाया जाना चाहिए?

24. अपराधों की एक श्रेणी जिसे विशेष रूप से संहिता की धारा 313(1)(बी) की कठोरता से छूट दी गई है, वह है "समन मामले"। यह याद रखना चाहिए कि प्रत्येक मामला जिसमें विचारणीय अपराध दो वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है, एक "समन मामला "

है। इस प्रकार, अन्य सभी अपराध आम तौर पर पूरी तरह से एक अलग श्रेणी के होते हैं, जिनमें तीन साल की कैद से लेकर आजीवन कारावास तक और यहां तक कि मृत्युदंड तक की अलग-अलग सजा वाले अपराध शामिल हैं। इसलिए उस श्रेणी में कई अपराध हैं जो गंभीर और बहुत गंभीर अपराधों की तुलना में गंभीरता में बहुत कम गंभीर हैं। यहां तक कि कम गंभीर अपराधों से जुड़े मामलों में भी, क्या न्यायालय ऐसे अभियुक्त की मदद के लिए हाथ नहीं बढ़ा सकती, जो इस तरह की मदद का हकदार है?

25. संहिता की धारा 243(1), पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट मामले की सुनवाई में अभियुक्त को, कोई भी लिखित बयान देने में सक्षम बनाती है। जब ऐसा कोई बयान न्यायालय में दिया जाता है तो न्यायालय उसे रिकॉर्ड का हिस्सा बनाने के लिए बाध्य है। भले ही ऐसा मामला पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित न किया गया हो, तब भी अभियुक्त को (धारा 247 के तहत) वही अधिकार है । यहां तक कि सत्र न्यायालय द्वारा विशेष रूप से विचारणीय अपराधों में शामिल अभियुक्त भी लिखित कथन देने के अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं (अंतर्गत संहिता की धारा 233(2))। यह सामान्यत सबको ज्ञात है कि ऐसे अधिकांश लिखित कथन,अभियुक्त के अधिवक्ता द्वारा तैयार किए जाते हैं। यदि इस तरह के लिखित बयानों को पूरी तरह से सीधे अभियुक्त के बयानों के रूप में माना जा सकता है, तो इसके बाद यहां

निम्न लिखित विशेष आकस्मिकताओं में निर्धारित तरीके से उसके द्वारा दिए गए उत्तरों को समान महत्व क्यों नहीं दिया जाता है।

26. हमारा मानना है कि ऐसी विशेष अत्यावश्यकताओं के संबंध में एक व्यावहारिक और मानवतावादी दृष्टिकोण आवश्यक है। संहिता की धारा 313(1) के खंड (बी) में शब्द "करेगा" की व्याख्या न्यायालय पर अनिवार्य के रूप में की जानी चाहिए और इसका अनुपालन तब किया जाना चाहिए जब यह अभियुक्त के लाभ के लिए हो। लेकिन अगर यह उचित मामलों में उसकेपूर्वाग्रह और नुकसान के लिए काम करता है तो न्यायालय को ऐसा करना चाहिए, उदाहरण के लिए, यदि अभियुक्त न्यायालय को संतुष्ट करता है कि वह भारी खर्च वहन करने के बिना न्यायालयके स्थल तक पहुंचने में असमर्थ है या वह शारीरिक अक्षमता के कारण लंबी यात्रा करने में असमर्थ है या ऐसी ही कोई अन्य कठिनाई है तो उसे ऐसी कठिनाईयों से छुटकारा दिलाये और साथ ही ऐसे कदम उठाये जिससे धारा 313 की आवश्यकताओं की भी पालना सुनिश्चित हो। यह कैसे हासिल किया जा सकता है?

27. उपरोक्त स्थिति बसव राज आर पाटिल बनाम कर्नाटक राज्य (2000 (8) एससीसी 740) और केया मुखर्जी बनाम मैग्मा लीजिंग लिमिटेड और अन्य (2008) 8 एससीसी 447) में इंगित की गई थी ।।

28. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि मौजूदा मामले में किसी भी अभियोगात्मक सामग्री का कोई संदर्भ नहीं था। यदि अभियोजन मामले की

नींव सीमा शुल्क अधिकारियों के समक्ष कथित संस्वीकृति थी, तो उस तथ्य को अभियुक्त व्यक्तियों के ध्यान में नहीं लाया गया था।

29. उपरोक्त स्थिति होने में, आक्षेपित निर्णय में कोई त्रुटि नहीं हैं, अतः हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अपील खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रेखा राठौड़ (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया ।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया हैं और किसी अन्य उदेश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता हैं। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उदेश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।